दुरूद और सलाम

मौलाना सैयद अबुलआला मौदूदी

अनुवाद

डॉ॰ कौसर यज़दानी नदवी

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान निहायत रहमवाला है।'

इन्नल्ला-ह-व मलाइ-क-तहू युसल्लू-न अलन्नबी, या अय्युहल्लज़ी-न आमनू सल्लू अलैहि व सल्लिमू तस्लीमा।

(क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-56)

"अल्लाह और उसके फ़रिश्ते नबी (सल्ल॰) पर दुरूद भेजते हैं। ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम भी उनपर दुरूद व सलाम भेजो।"

क़ुरआन मजीद की इस आयत में एक बात यह बताई गई कि अल्लाह और उसके फ़रिश्ते नबी (सल्ल॰) पर दुरूद भेजते हैं।

अल्लाह की तरफ़ से अपने नबी पर सलात (दुरूद) का मतलब यह है कि वह नबी (सल्ल॰) पर बेहद मेहरबान है। आपकी तारीफ़ करता है, आपके काम में बरकत देता है, आपका नाम बुलन्द करता है और आपपर अपनी रहमत की बारिश करता है। फ़रिश्तों की तरफ़ से आप (सल्ल॰) पर सलात का मतलब यह है कि वे आपसे बहुत ज़्यादा मुहब्बत रखते हैं और आपके लिए अल्लाह से दुआ करते हैं कि वह आप (सल्ल॰) को ज़्यादा-से-ज़्यादा बुलन्द

दर्जे दे, आपके दीन को सरबुलन्द करे, आपकी शरीअत को बढ़ावा दे और आपको तारीफ के ऊँचे मक़ाम पर पहुँचाए। आगे-पीछे की आयतों पर निगाह डालने से साफ़ मालूम हो जाता है कि यहाँ यह बात किस लिए कही गई है। यह वक़्त वह था, जब इस्लाम के दुश्मन इस साफ़-सुथरे दीन की तरक़्क़ी पर अपने मन की जलन निकालने के लिए प्यारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के ख़िलाफ़ इलज़ामों की बौछार कर रहे थे और अपने नज़दीक यह समझ रहे थे कि वे इस तरह कीचड़ उछालकर आप (सल्ल॰) के इस अख़लाक़ी असर को ख़त्म कर देंगे, जिसकी वजह से इस्लाम और मुसलमानों के क़दम हर दिन बढ़ते चले जा रहे हैं। इन हालात में सूरा-33 अहज़ाब की यह आयत उतारकर अल्लाह ने दुनिया को यह बताया कि इस्लाम-दुश्मन, मुशरिक और मुनाफ़िक़ लोग मेरे नबी को बदनाम करने और नीचा दिखाने की जितनी चाहें कोशिश कर देखें, आख़िरकार वे मुँह की खाएँगे, इसलिए कि मैं उसपर मेहरबान हूँ और सारी दुनिया का इन्तिज़ाम जिन फ़रिश्तों के ज़रिए से चल रहा है, वे सब उसके हिमायती और उसकी तारीफ़ करनेवाले हैं। वे नबी (सल्ल॰) की बुराई करके क्या पा सकते हैं, जबकि मैं उनका नाम बुलन्द कर रहा हूँ और

मेरे फ़रिश्ते उनकी तारीफ़ों की चर्चा कर रहे हैं। वे अपने ओछे हथियारों से उसका क्या बिगाड़ सकते हैं, जबकि मेरी रहमत और बरकतें उसके साथ हैं और फ़रिश्ते रात-दिन दुआ कर रहे हैं कि ऐ पूरी दुनिया के रब! मुहम्मद (सल्ल॰) का मर्तबा ऊँचा कर और उनके दीन को और ज़्यादा बढ़ावा दे।

इस आयत में दूसरी बात यह बयान हुई कि "ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, तुम भी उनपर दुरूद व सलाम भेजो।" दूसरे शब्दों में इसका मतलब यह है कि "ऐ लोगो जिनको अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की वजह से सीधा रास्ता मिला है, तुम उनकी क़द्र पहचानो और उनके भारी एहसान का हक़ अदा करो, तुम जहालत के अंधेरों में भटक रहे थे, इस शख़्स ने तुम्हें इल्म की रौशनी दी, तुम अख़लाक़ की पस्तियों में गिरे हुए थे, इसने तुम्हें इतना ऊपर उठाया कि आज तुम अख़लाक़ के ऊँचे दर्जे पर हो। तुम जंगलीपन और हैवानियत में पड़े हुए थे, इस शख़्स ने तुमको बेहतरीन इनसानी तहज़ीब (सभ्यता) दी। ख़ुदा का इनकार और उसकी नाफ़रमानी करनेवाले इसी लिए इस नबी के दुश्मन बने हुए हैं कि उसने ये एहसान तुमपर किए, वरना उसने किसी के साथ निजी तौर पर कोई

बुराई न की थी। इसलिए अब तुम्हारी एहसानपसन्दी का ज़रूरी तक़ाज़ा यह है कि जितनी दुश्मनी वे उस निहायत भले शख़्स के साथ कर रहे हैं, उतनी ही, बल्कि उससे ज़्यादा तुम उसके हो जाओ। जितनी वे उसकी बुराई करते हैं, उतनी ही, बल्कि उससे ज़्यादा तुम उसकी तारीफ़ करो। जितना वे इसका बुरा चाहते हैं, उतना ही, बल्कि उससे भी ज़्यादा तुम उसका भला चाहो और उसके हक़ में वही दुआ करो जो अल्लाह के फ़रिश्ते रात और दिन उसके लिए कर रहे हैं कि ऐ हमारे रब! जिस तरह तेरे नबी ने हमपर बेहद एहसान किए हैं तू भी उनपर बेहद रहमत फ़रमा, उनका मर्तबा दुनिया में भी सबसे ज़्यादा बुलन्द कर और आख़िरत में उन्हें तमाम क़रीब रहनेवालों से बढ़कर अपने क़रीब कर।

इस आयत में मुसलमानों को दो चीज़ों का हुक्म दिया गया है।

एक सल्लू अलैहि (इसपर दुरूद भेजो) और दूसरी सल्लिमू तस्लीमा (सलाम भेजो)। 'सलात' शब्द जब 'अला' के साथ आता है तो इस अला के तीन मतलब होते हैं—

एक किसी की तरफ़ झुक जाना, उसकी तरफ़ मुहब्बत के साथ मुतवज्जह होना और उसका ख़याल रखना।

दूसरा किसी की तारीफ़ करना।

तीसरा किसी के हक में दुआ करना।

यह शब्द जब अल्लाह के लिए बोला जाएगा तो ज़ाहिर है कि तीसरे मानी में नहीं हो सकता, क्योंकि अल्लाह का किसी और से दुआ करने के बारे में तो दूर-दूर तक सोचा ही नहीं जा सकता, इसलिए यक़ीनन वह सिर्फ़ पहले दो मानी में होगा। लेकिन जब यह शब्द बन्दों के लिए बोला जाएगा, भले ही वे फ़रिश्ते हों या इनसान, तो वह तीनों मानी में होगा। इसमें मुहब्बत का मतलब भी होगा, तारीफ़ और प्रशंसा का अर्थ भी और रहमत की दुआ के मानी भी, इसलिए ईमानवालों को नबी (सल्ल॰) के हक़ में 'सल्लू अलैहि' (उनपर दुरूद भेजने) का हुक्म देने का मतलब यह है कि तुम उनके हो जाओ, उनकी तारीफ़ें करो, उनके लिए दुआ करो।

'सलाम' का शब्द भी दो मानी रखता है—

एक, हर तरह की आफ़तों और नुक़सानों से बचे रहना, जिसके लिए हम एक शब्द 'सलामती' बोलते हैं।

दूसरा, सुलह करना और मुख़ालफ़त का न होना।

इसलिए नबी (सल्ल॰) के हक़ में 'सल्लिमू तस्लीमा' कहने का

एक मतलब यह है कि तुम उनके हक़ में मुकम्मल सलामती की दुआ करो और दूसरा मतलब यह है कि तुम पूरी तरह दिल व जान से उनका साथ दो। उनकी मुख़ालफ़त करने से बचो और उनके सच्चे फ़रमाँबरदार रहो।

यह हुक्म जब उतरा तो कई सहाबा (रज़ि॰) ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल! सलाम का तरीक़ा तो आप हमें बता चुके हैं (यानी नमाज़ में 'अस्सलामु अलै-क अय्युहन्नबिय्यु व रह-मतुल्लाहि व ब-र-कातुहू'' और मुलाक़ात के वक़्त 'अस्सलामु अलै-क या रसूलल्लाह! कहना) मगर आपपर सलात (दुरूद) भेजने का तरीक़ा क्या है?

इसके जवाब में नबी (सल्ल॰) ने बहुत-से लोगों को अलग-अलग मौक़ों पर दुरूद के बोल सिखाए हैं।

हज़रत कअ्ब (रज़ि॰) ने दुरूद के ये शब्द रिवायत किए हैं—

अल्लाहुम-म-सल्लि अला मुहम्मदिंव-व अला आलि मुहम्मदिन कमा सल्लै-त अला इबराही-म व अला आलि इबराही-म इन्-न-क हमीदुम मजीद, व बारिक अला मुहम्मदिंव-व अला आलि मुहम्मदिन कमा बारक-त अला इबराही-म व अला आलि इबराही-म इन्-न-क हमीदुम-मजीद।

"ऐ अल्लाह! मुहम्मद और उनकी आल पर रहमत भेज, जिस तरह तूने इबराहीम और उनकी आल पर रहमत भेजी। बेशक तू तारीफ़वाला, बुज़ुर्गीवाला है। ऐ अल्लाह! मुहम्मद और उनकी आल को बरकत दे, जिस तरह तूने हज़रत इबराहीम और उनकी आल को बरकतें दीं। बेशक तू तारीफ़वाला और बुज़ुर्गीवाला है।"

अलफ़ाज़ की थोड़ी कमी-बेशी के साथ हज़रत इब्ने- अब्बास (रज़ि॰) अबू-हमीद साअदी, अबू-मसऊद बदरी (रज़ि॰), अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰), बरीदा (रज़ि॰), तलहा (रज़ि॰), अबू-हुरैरा (रज़ि॰) ने भी दुरूद रिवायत किए हैं।

ये तमाम दुरूद शब्दों के थोड़े-थोड़े फ़र्क़ के बावजूद माने और मतलब में एक हैं। इनके अन्दर कुछ अहम बातें हैं, जिन्हें अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

1. इन सबमें नबी (सल्ल॰) ने मुसलमानों से फ़रमाया है कि मुझपर दुरूद भेजने का बेहतरीन तरीक़ा यह है कि तुम अल्लाह से दुआ करो कि ऐ ख़ुदा! तू मुहम्मद पर दुरूद भेज। नादान लोग जिन्हें समझ नहीं है, इसपर तुरन्त यह एतिराज़ जड़ देते हैं कि यह तो अजीब बात हुई। अल्लाह तो हमसे फ़रमा रहा है कि तुम मेरे

नबी पर दुरूद भेजो, पर हम उल्टा अल्लाह से कहते हैं कि तू दुरूद भेज, हालाँकि असूल में इस तरह नबी (सल्ल॰) ने लोगों को यह बताया है कि तुम मुझपर सलात (दुरूद) का हक़ अदा करना चाहो भी तो नहीं कर सकते। इसलिए अल्लाह ही से दुआ करो कि वह मुझपर सलात फ़रमाए।

ज़ाहिर बात है कि हम नबी (सल्ल॰) के मर्तबे बुलन्द नहीं कर सकते, अल्लाह ही बुलन्द कर सकता है। हम नबी (सल्ल॰) के एहसानों का बदला नहीं दे सकते, अल्लाह ही उनका बदला दे सकता है। हम नबी (सल्ल॰) के ज़िक्र को बुलन्द करने के लिए और उनके दीन को बढ़ावा देने के लिए चाहे जितनी कोशिशें करें, अल्लाह की मेहरबानी और उसकी तौफ़ीक़ व ताईद के बिना उसमें कोई कामयाबी नहीं हो सकती, जबकि नबी (सल्ल॰) की मुहब्बत व अक़ीदत भी हमारे दिल में अल्लाह ही की मदद से बैठ सकती है, वरना शैतान न मालूम कितने वसवसे दिल में डालकर हमें नबी (सल्ल॰) से दूर कर सकता है। (अ-आज़नल्लाहु मिन ज़ालिक)। इसलिए नबी (सल्ल॰) पर सलात का हक़ अदा करने की शक्ल इसके सिवा नहीं है कि अल्लाह से नबी पर सलात की दुआ की जाए, जो आदमी 'अल्लाहुम-म सल्लि अला मुहम्मद'

कहता है, वह मानो अल्लाह के दरबार में अपनी मजबूरी और कमज़ोरी बताते हुए अर्ज़ करता है कि ऐ अल्लाह! तेरे नबी पर सलात का जो हक़ है, उसे अदा करना मेरे बस में नहीं है, तू ही मेरी तरफ़ से उसे अदा कर और मुझसे उसके अदा करने में जो ख़िदमत चाहे ले ले।

2. नबी (सल्ल॰) के शाने-करम ने यह गवारा न किया कि वे अपनी ज़ात को इस दुआ के लिए ख़ास कर लें, बल्कि अपने साथ अपनी आल-औलाद और बीवियों को भी शामिल कर लिया, औलाद और बीवियों का अर्थ तो साफ़ है, रहा आल का शब्द तो वह सिर्फ़ नबी (सल्ल॰) के ख़ानदानवालों के लिए ख़ास नहीं है, बल्कि इसमें वे सभी आ जाते हैं जो नबी (सल्ल॰) की पैरवी करनेवाले हों और उनके तरीक़े पर चलें। अरबी ज़बान में आल में वे सब लोग समझे जाते हैं जो उसके साथ मदद करनेवाले और उसकी पैरवी करनेवाले हों, चाहे वे उसके रिश्तेदार हों या नहीं।

क़ुरआन मजीद में 14 जगहों पर आले-फ़िरऔन का शब्द आया है और उनमें से किसी जगह भी आल का मतलब सिर्फ़ फ़िरऔन के ख़ानदानवाले नहीं हैं, बल्कि वे सब लोग हैं जो हज़रत मूसा (अलैहि॰) के मुक़ाबले में उसके साथी थे (मिसाल के तौर

पर देखिए सूरा-2 बक़रा, आयतें-49-50; सूरा-3 आले-इमरान आयत-11; सूरा-7 आराफ़, आयत-130; सूरा-40 मुअमिन, आयत-46) इस तरह आले-मुहम्मद से हर वह आदमी निकला हुआ है जो मुहम्मद (सल्ल॰) के तरीक़े पर न हो, भले ही वह उनके ख़ानदान से ताल्लुक़ रखता हो और इसमें हर वह आदमी दाख़िल है जो नबी (सल्ल॰) के तरीक़े पर चलता हो, चाहे उसका ताल्लुक़ नबी (सल्ल॰) के ख़ानदान से दूर का भी न हो। अलबत्ता नबी (सल्ल॰) के ख़ानदान के वे लोग दर्जे के एतिबार से पहले आले-मुहम्मद हैं जो आपसे ख़ानदानी ताल्लुक़ भी रखते हैं और आप (सल्ल॰) की पैरवी करनेवाले भी हैं।

3. हर दुरूद जो नबी (सल्ल॰) ने सिखाया है, उसमें यह बात ज़रूर शामिल है कि आप (सल्ल॰) पर वैसी ही मेहरबानी फ़रमाई जाए जैसी इबराहीम और आले-इबराहीम पर फ़रमाई गई है। इस बात को समझने में लोगों को बड़ी मुश्किल पेश आई है। आलिमों ने इसका अलग-अलग मतलब समझा है, पर कोई मतलब दिल को नहीं लगता। मेरे नज़दीक सही मतलब यह है (और अल्लाह ही बेहतर जानता है) कि अल्लाह ने हज़रत इबराहीम पर एक ख़ास मेहरबानी की है जो आज तक किसी पर नहीं की और

वह यह है कि तमाम वे इनसान जो नुबूवत, वह्य और आसमानी किताब को हिदायत का स्रोत मानते हैं, वे हज़रत इबराहीम की पेशवाई पर एक राय हैं, चाहे वे मुसलमान हों या ईसाई या यहूदी, इसलिए नबी (सल्ल॰) के इरशाद का मंशा यह है कि जिस तरह सारे नबियों को माननेवाले हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) को अपना पेशवा मानते हैं, उसी तरह अल्लाह मुझे भी सबका रहनुमा बना दे और कोई ऐसा आदमी जो नुबूवत का माननेवाला हो, मेरी नुबूवत पर ईमान लाने से महरूम न रह जाए।

इस बात पर सभी आलिमों का इत्तिफ़ाक़ है कि नबी (सल्ल॰) पर दुरूद भेजना सुन्नत है, जब नबी (सल्ल॰) का नाम आए तो इसका पढ़ना मुस्तहब (पसन्दीदा) है और ख़ास तौर पर इसका नमाज़ में पढ़ना मसनून है। इस बात पर भी सब एक राय हैं कि उम्र में एक बार नबी (सल्ल॰) पर दुरूद भेजना फ़र्ज़ है क्योंकि अल्लाह ने साफ़ शब्दों में इसका हुक्म दिया है, लेकिन इसके बाद दुरूद के मसले में उलमा की राय अलग-अलग पाई जाती हैं।

इमाम शाफ़ई (रह॰) मानते हैं कि नमाज़ में आख़िरी बार जब आदमी तशह्हुद पढ़ता है, उसमें नबी (सल्ल॰) पर दुरूद पढ़ना फ़र्ज़ है। अगर कोई न पढ़ेगा तो नमाज़ न होगी। सहाबा में से

इब्ने-मसऊद, अबू-मसऊद अनसारी, इब्ने-उमर और जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰), ताबईन में से शाबी, इमाम मुहम्मद बाक़र-मुहम्मद-बिन-काब क़ुरज़ी और मुक़ातिल-बिन-हय्यान और फ़ुक़हा में इसहाक़-बिन-राहवैह (रह॰) का भी यही मसलक था और आख़िर में इमाम अहमद-बिन-हंबल (रह॰) ने भी इसी को अपनाया था।

इमाम अबू-हनीफ़ा (रह॰), इमाम मालिक (रह॰) और बहुत-से उलमा का मसलक यह है कि दुरूद उम्र में सिर्फ़ एक बार पढ़ना फ़र्ज़ है। यह शहादत के कलिमे की तरह है कि जिसने एक बार अल्लाह के इलाह होने और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की रिसालत का इक़रार कर लिया, उसने फ़र्ज़ अदा कर दिया। इसी तरह जिसने एक बार दुरूद पढ़ लिया उसने नबी (सल्ल॰) पर दुरूद पढ़ने का फ़र्ज़ अदा कर दिया। इसके बाद न कलिमा पढ़ना फ़र्ज़ है, न दुरूद।

एक और गरोह नमाज़ में इसका पढ़ना हर हाल में वाजिब क़रार देता है, मगर तशह्हुद के साथ पढ़ने की शर्त नहीं लगाता।

एक दूसरे गरोह के नज़दीक हर दुआ में इसका पढ़ना वाजिब है और कुछ लोग यह मानते हैं कि जब भी नबी (सल्ल॰) का नाम आए, दुरूद पढ़ना वाजिब है और एक गरोह के नज़दीक एक

मजलिस में नबी (सल्ल॰) का ज़िक्र, चाहे कितनी ही बार आए, दुरूद पढ़ना बस एक बार वाजिब है।

रायों का यह फ़र्क़ सिर्फ़ वाजिब होने के मामले में है, बाक़ी रही दुरूद की फ़ज़ीलत और उसके अज्र और सवाब की बात और उसका एक बहुत बड़ी नेकी होना, तो इसपर पूरी उम्मत एक राय है। जिस शख़्स में ज़रा भी ईमान हो वह इस बात में कलाम नहीं कर सकता। दुरूद तो फ़ितरी तौर पर हर उस मुसलमान के दिल से निकलेगा जिसे यह एहसास हो कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) अल्लाह के बाद हमारे सबसे बड़े एहसान करनेवाले हैं। इस्लाम और ईमान की जितनी क़द्र इनसान के दिल में होगी, उतनी ही ज़्यादा क़द्र उसके दिल में नबी (सल्ल॰) के एहसानों की भी होगी और जितना ज़्यादा आदमी इन एहसानों की क़ीमत पहचानेगा, उतना ही ज़्यादा नबी (सल्ल॰) पर दुरूद भेजेगा। इस तरह हक़ीक़त में दुरूद की ज़्यादती एक पैमाना है जो नापकर बता देता है कि दीने-मुहम्मद (सल्ल॰) से एक आदमी कितना गहरा ताल्लुक़ रखता है और ईमान की नेमत की कितनी क़द्र उसके दिल में है। इसी वजह से नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"जो आदमी मुझपर दुरूद भेजता है, फ़रिश्ते उसपर दुरूद

भेजते रहते हैं, जब तक वह मुझपर दुरूद भेजता रहे।"

(हदीस : अहमद व इब्ने-माजा)

"जो मुझपर एक बार दुरूद भेजता है, अल्लाह उसपर दस बार दुरूद भेजता है।" (हदीस : मुस्लिम)

"क़ियामत के दिन मेरे साथ रहने का सबसे ज़्यादा हक़दार वह होगा जो मुझपर सबसे ज़्यादा दुरूद भेजेगा।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

"बख़ील (कंजूस) है वह आदमी जिसके सामने मेरा ज़िक्र किया जाए और वह मुझपर दुरूद न भेजे।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम!

—:—